कुमाऊँ के चर्चित लोक संस्कृतिकर्मी, एवं लोककलाकार महापुरूष व महिलाऐं और संस्कृति सरंक्षण में उनका योगदान

गजदीप कुमार आर्या
शोध छात्र इतिहास विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय बागेश्वर
(उत्तराखण्ड)

डॉ0 बी0सी0 तिवारी
एसोसिएट प्रोफेसर
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय बागेश्वर
(उत्तराखण्ड)

मोहन उप्रेती –

इनका जन्म अल्मोड़ा में सन् 1928 ई. में हुआ था, इन्होंने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा अल्मोड़ा से ही प्राप्त उनके माता पिता दोनों धार्मिक प्रवृत्ति के थे, सन् 1961 ई. में उनका विवाह नैमा खान से हुआ नैमा खान भी राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय से ग्रेजुएट थी, "हिमांशु जोशी प्रख्यात गायक उनके भतीजे हैं, जो इंडियन ओशन बैंड के नाम से संगीत कार्यक्रमों का आयोजन करते है"[1] इन्होंने प्राथमिक शिक्षा अल्मोड़ा और माध्यमिक शिक्षा भी अल्मोड़ा से ही प्राप्त की वे ट्रेड यूनियन के नेता 'पूरन चन्द जोशी' जी से अत्यधिक प्रभावित थे तथा उन्हें अपना गुरू मानते थे, इन्होंने अपनी उच्च शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से पूरी की, उन्होंने लोक कलाकारों को संगठित किया तथा 'लोक कलाकार संघ' के नाम से नाट्य संघ का गठन किया, उसमें लोक कलाकारों से संबधित किसी भी समस्या को कहने और उसका समाधान करने का मंच प्रदान किया था, "सन् 1940 ई. में मोहन उप्रेती जी ने ब्रजमोहन शाह के साथ समस्त उत्तराखण्ड की यात्रा की"[2] इस यात्रा का मुख्य उद्देश्य आधुनिकता की दौड़ में विलुप्त होती जा रही कुमाऊँ सहित राज्य की प्राचीन लोक कला, लोकगीत, परंपराओं को बचाना था तथा कुमाऊँ के लोक जनमानस में इन प्राचीन लोक कलाओं के सरंक्षण की अलख को जगाना था, इसके लिए उन्होंने अपनी यात्रा के दौरान उन्होंने प्राचीन लोक कलाओं, लोकगीतों, धुनों, और परंपराओं को एकत्रित किया, "उन्होंने कुमाऊँ में विलुप्त होती जा रही रामलीलाओं को पुनर्जीवित करने का कार्य भी किया"[3] रामलीलाओं को ग्रामीण परिवेश से शहरी क्षेत्र में लाने के लिए भी उन्होंने सराहनीय कार्य किया, और अपनी लोक संस्कृति को बचाने में सराहनीय पहल की। "मोहन उप्रेती ने सन् 1968 ई. में पर्वतीय कला केन्द्र की स्थापना की"[4] और यहाँ पर उन्होंने पर्वतीय युवकों को अपनी संस्कृति के बारे में जानने के लिए उनसे आवाहन किया, और पर्वतीय युवक व युवतियों को अपनी संस्कृति के प्रति जागरूकता और संरक्षण की पहल की, उन्होंने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय दिल्ली में अध्यापक के तौर पर भी अपनी सेवायें दी। सन् 2006 ई. में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय से जुड़े हुए "दिवान सिंह बजेड़ी द्वारा मोहन उप्रेती 'द मैन एंड हिस आर्ट' नाम से उनकी आत्मकथा लिखी गयी है"[5]

संस्कृति संरक्षण में मोहन उप्रेती जी का योगदान – मोहन दा ने अपनी कला के माध्यम से कुमाऊँ सहित राज्य और अखिल भारतीय स्तर पर अपनी विशिष्ट पहचान बनायी और अपनी पुरखों द्वारा दी गयी कला के माध्यम से कुमाऊँनी संस्कृति के सरंक्षण और विकास में अपना अतुलनीय योगदान दिया है।

गोपाल बाबू गोस्वामी –

इनका जन्म अल्मोड़ा के पाली पछाऊँ क्षेत्र में मल्ला गेवाड़ के चौखुटिया तहसील के चाँदीखेत ग्राम में 2 फरवरी सन 1941 ई. में हुआ ये राज्य के एक प्रसिद्ध लोक गायक थे, इनकी माता जी का नाम चनुली देवी तथा पिता का नाम मोहन गिरि था, इनके माता पिता ग्रामीण परिवेश से संबंध रखते थे, तथा धार्मिक प्रवृत्ति के थे, जब ये कक्षा 8 में अध्ययन करते थे तो इनके पिता का स्वर्गवास हो गया, सारे परिवार की जिम्मेदारी इनके कंधों पर आ गयी, इनको पहाड़ में काम नहीं मिला तो "ये रोजगार की तलाश में दिल्ली पलायन कर गये"[6] वहाँ जाकर इन्होंने कई वर्ष रोजगार की तलाश में धक्के खाये, बड़ी मुश्किल से इन्हें प्राइवेट जगह काम मिला, कुछ वर्ष डी'जी'आर में नौकरी भी की लेकिन पक्के नहीं हो सके, इसके बाद फिर उन्होंने रोजगार की तलाश में दिल्ली, पंजाब और हिमांचल राज्य में कार्य की तलाश की, लेकिन इनको सफलता नहीं मिली थक हार कर वापस अपने गाँव आ गये और काश्तकारी के कार्य में संलग्न हो गये। "सन् 1970 ई में उत्तर प्रदेश गीत और नाटक प्रभाग का एक ग्रुप सांस्कृतिक कार्यक्रम के लिए चौखुटिया आया था"[7] यहीं पर गोपाल बाबू गोस्वामी जी को अपनी प्रतिभा को दिखाने का अवसर प्राप्त हो गया, उनके एक क्रू मैंबर ने गोपाल बाबू गोस्वामी से प्रभावित होकर उनसे ग्रुप से जुड़ने को कहा, "सन् 1971 ई. में वे गीत और नाटक प्रभाग में नियुक्त हो गये"[8] फिर उन्होंने पीछे मुड़कर नहीं देखा, प्रभाग के द्वारा दिये गये प्लेटफार्म में दिल से कार्य करने लगे और इन्हें दिन पर दिन सफलता प्राप्त होने लगी, और इनकी कीर्ती राज्य में सर्वत्र फैल गयी, इसी दौरान गोपाल बाबू गोस्वामी ने आकाशवाणी लखनऊ में एक ऑडिशन दिया, और उसके ऑडिशन में पास हो गये, और उन्होंने आकाशवाणी गायक के रूप में स्वयं

को स्थापित कर लिया, "लखनऊ में ही उन्होंने अपना पहला 'कैले बाजि मुरूली ओ बैणा' गाना गाया"[9] जो काफी प्रसिद्ध हो गया, आकाशवाणी केन्द्र नजीमाबाद व अल्मोड़ा से प्रसारित होने पर इस गीत की लोकप्रियता आसमान छूने लगी, "सन् 1976 ई में एच.एम.वी ने अपना पहला कैसेट बनाया, जो कुमाऊँनी गीतों के कैसेट में काफी प्रचलित हुआ"[10] 'पालीडोर' कैसेट कंपनी के साथ उन्होनें काफी लम्बा करार किया और उसी कंपनी के साथ गोपाल बाबू गोस्वामी ने कई गीत गाये "(हिमाला को ऊँचो डाना प्यारो मेरो गाँव, छोड़ दे मेरो हाथा में ब्रह्मचारी छों भुर भुरू उज्याव है गायो पेटा खातिर घुधुती न बासा आंखी तेरी काई–काई जा चेली जा स्वरास) आदि उनके प्रसिद्ध गीत है, 'गीता और प्रभाग' की गायिका श्रीमती चंद्रा बिष्ट के साथ उन्होंने लगभग 15 कैसेट बनाये।

लेखनी से भी उन्होंने समाज की कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया, उन्होंने गीतमाला लिखा जो कुमाऊँनी भाषा में लिखी गयी है, दर्पण राष्ट्रज्योति, जो हिन्दी भाषा में लिखी गयी है, आदि प्रमुख थे"[11] उनकी एक पुस्तक 'उज्याव' अभी प्रकाशित होनी है"[12] सन् 90 के दशक में उन्हें ब्रेन ट्यूमर हो गया, अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान दिल्ली में उनका आपरेशन भी हुआ लेकिन वे पुनः लाभ प्राप्त ना कर सके 26 नवंबर सन् 1996 ई. को उनकी असामायिक मृत्यु हो गयी।

संस्कृति संरक्षण में गोपाल बाबू गोस्वामी जी का योगदान –

गोपाल बाबू गोस्वामी जी ने अपनी कला के द्वारा कुमाऊँ के साथ ही प्रदेश में अखिल भारतीय स्तर पर अपनी कला के माध्यम से काफी नाम कमाया और अपने गीतों और रचनाओं के माध्यम से संस्कृति सरंक्षण के क्षेत्र में अतुलनीय योगदान दिया।

कबूतरी देवी –

इनका जन्म काली कुमाऊँ चम्पावत जनपद में सन् 1945 ई को हुआ था, इनके पिता का नाम देव राम था "ये 'मिरासी' लोक गायक परिवार से संबंधित थी"[13] विवाह के बाद इनकी एक पुत्री थी, इन्होंने संगीत की प्रारंभिक शिक्षा अपने गाँव के देब राज और देवती देवी और अपने पिता श्री रामकाली जी से ली जो तत्कालीन प्रख्यात गायक थे, "ये मूल रूप से जनपद पिथौरागढ़ के मूनाकोट ब्लाक के क्तीतड़ गाँव की निवासी थीं"[14]

आज तक यहाँ पक्की सड़क नहीं बन पाई है, इसके लिए अड़किनी से 6 किलोमीटर पैदल चलना पड़ता है, पहाड़ी गानों में प्रयुक्त रागों का इन्होंने बचपन से ही अभ्यास करना आरम्भ कर दिया था, इनकी गायन शैली अन्य गायिकाओं से अलग है, श्री दीवानी राम जी ने इनकी प्रतिभा को देखा ओर इन्हें आकाशवाणी और स्थानीय कौतिक मेलों सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भागीदारी कराई, "ये आकाशवाणी से गाने वाली राज्य की प्रथम गायिका हैं"[15] राज्य के लोकगीतों को आकाशवाणी और प्रतिष्ठित मंचों के माध्यम से अखिल भारतीय स्तर पर जनमानस के सम्मुख रखा, सन् 70 से 80 के दशक में नजीमाबाद और लखनऊ आकाशवाणी से कुमाऊँनी गानों को उन्होंने प्रसारित कराया तो उनकी ख्याति पूरे राज्य में फैल गयी, उन्होंने पर्वतीय लोक संगीत को राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय मंचों तक पहुँचाया तथा कुमाऊँ को विश्व के नक्शे में एक खास पहचान दिलाई इन्हें 'नवोदय पर्वतीय कला केन्द्र' पिथौरागढ़ में सन् 2000 ई. में छोलिया महोत्सव सम्मान प्राप्त हो चुका है और राष्ट्रपति पुरूस्कार भी मिला"[16]

संस्कृति संरक्षण में कबूतरी देवी जी का योगदान –

उन्होंने राज्य के लोक गीतों को आकाशवाणी के मंच से प्रसारित करने का कार्य किया, सन् 70 के दशक में अपने गानों से इन्होंने पहाड़ी लोकगीतों को पहचान दिलाई, उन्होनें आकाशवाणी के लिए 100 से भी ज्यादा गीतों को गाया"[17] इन्हें 'कुमाऊँ की कोकिला' नाम से जाना जाता है, इनको राष्ट्रपति सम्मान से भी पुरूस्कृत किया जा चुका है, इन्होंने आकाशवाणी के लिए 100 से भी ज्यादा गीत गाए, इन्हें उत्तराखण्ड की 'तीजन बाई' भी कहा जाता है"[18] इनका आरम्भिक जीवन बड़े कष्ट में बीता, कबूतरी देवी पर्वतीय शैली के लगभग सभी विधाओं में पारंगत थी, मंगल गीत, ऋतु रैण, पहाड़ के प्रवासी का दर्द, कृषि गीत, पर्वतीय पर्यावरण, पर्वतीय सौन्दर्य की अभिव्यक्ति, भगनौल न्यौली जागर, घनेली झोड़ा और चांचरी आदि को गाने में निपुण थी, इन्होंने अपने जीवन के आरम्भिक 20 वर्ष अभाव में गुजारे "सन् 2002 में उन्हें नवोदय पर्वतीय कला केन्द्र, पिथौरागढ़ के छोलिया महोत्सव में बुलाकर सम्मानित किया गया"[19] 'लोक संस्कृति कला एवं विज्ञान शोध समिति' ने उन्हें अल्मोड़ा में सम्मानित किया, इन्हें पहाड़ संस्था ने भी सम्मानित किया, सरकार द्वारा इन्हें पेंशन भी दी जाती है, सन् 2016 में सरकार ने इन्हें लोकगायन के क्षेत्र में 'लाइफटाइम अचीवमेंट' का पुरूस्कार भी दिया"[20]

पद्मश्री यशोधर मठपाल –

इनका जन्म अल्मोड़ा जनपद के ग्राम न्यौला में 6 जून 1939 को हुआ था, इनके पिता का नाम हरिदत्त मठपाल और माता का नाम कांति देवी था, इनकी पत्नी का नाम गीता मठपाल है, जिनका स्वर्गवास हो गया है, "उन्हीं के नाम पर उन्होंने म्यूजियम की स्थापना की है"[21] इनके दो पुत्र है जो चिकित्सा के क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं आरम्भ में इन्होंने राष्ट्रीय मानव संगहालय में नौकरी की लेकिन इस नौकरी से त्यागपत्र दे कर "सन् 1983 ई. में जनपद नैनीताल से 20

किलोमीटर की दूरी पर इन्होंने 'लोक संस्कृति संग्रहालय' की स्थापना की"[22] इन्होंने उत्तराखण्ड की संस्कृति साहित्य, पुरातत्व को संरक्षित करने में अपना जीवन न्यौछावर कर दिया उत्तराखण्ड की काष्ठ शिल्प पर भी इन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किये हैं, "इन्हें सन् 1959 ई. में ललित कला स्वर्ण पदक, सन् 1964 ई. में कला श्री सम्मान, सन् 1995 ई. में पिनरलो (इटली) में 'इंटरनेश्नल फेडरेशन ऑफ रॉक आर्ट आर्गनाइजेशन' द्वारा गुफा कला में ऑनरेरी डिप्लोमा प्रदान किया गया है"[23] सन् 2005 ई. में इन्हें पद्म श्री सम्मान भी प्राप्त हो चुका है, मध्य प्रदेश उज्जैन में इन्हें अखिल भारतीय कलिदास सम्मान से भी नवाजा जा चुका है।

संस्कृति संरक्षण में यशोधर मठपाल जी का योगदान –

गुफाकला, काष्ठ कला, रॉक पैंटिंग्स के क्षेत्र में कार्य करने के साथ ही इन्होंने उत्तराखण्ड राज्य के संस्कृति सरंक्षण में उल्लेखनीय कार्य किया है, कुमाऊँनी संस्कृति के विभिन्न धरोहरों को इन्होंने अपने संग्रहालय में संजोया है, कुमाऊँ की काष्ठकला, धार्मिक कार्य, परंपरागत कार्य से संबधित हर वस्तु को इन्होंने अपने संग्रहालय में स्थान दिया है, कुमाऊँनी परंपरागत वस्त्र ,धार्मिक यात्राओं में प्रयुक्त विशेष वेशभूषा और ध्वज, पताकाऐं ऐपण, कुमाऊँनी काष्ठ शिल्प से संबंधित सभी वस्तुएं जिसमें बारीक से बारीक चीजों को संजोया गया है, युद्धोपकरण, आजादी के समय के अस्त्र शस्त्र और पाण्डुलिपियाँ पौराणिक साहित्य, 40 से ज्यादा देशों के करेंसी, पूर्व पाषाण काल से लेकर नवपाषाण काल तक के मानव के क्रमिक विकास की गाथा को चित्रों के माध्यम से संजोया है सेलखड़ी से बने औजार माइक्रोलिथ के औजार और अन्य सांस्कृतिक धरोहरों को उचित स्थान दिया है, और कुमाऊँ राज्य सहित देश की संस्कृति सरंक्षण में उल्लेखनीय कार्य किया

लोक गायक पप्पू कार्की –

पप्पू कार्की का जन्म 30 जून 1984 को पिथौरागढ़ के शैलावन गाँव में हुआ था, इनके पिता का नाम कृष्ण सिंह कार्की था, और माता का नाम कमला देवी था, इनकी आरम्भिक शिक्षा गाँव के सरकारी स्कूल में ही हुई, और उच्च शिक्षा थल बेरीनाग से की, उन्होंने स्नातक की पढ़ाई पूरी की, "उनकी पत्नी का नाम कविता कार्की है, उनका एक बेटा है जिसका नाम दक्ष कार्की है"[24] अपने पिता की तरह वे भी संगीत के एक प्रतिभावन कलाकार है, इनका वर्तमान निवास हल्द्वानी में हैं। ये शुरू से ही कुमाऊँनी लोक संगीत में दिलचस्पी रखते थे, इनके गुरू ने इनकी प्रतिभा को बचपन में ही पहचान लिया था और इन्होंने पप्पू कार्की को कुमाऊँनी लोक संगीत की शिक्षा दी "इनके गुरू का नाम कृष्ण सिंह कार्की था,"[25] इन्होंने अपने संगीत की शुरूआत रामा कैसेट के साथ की, जो दिल्ली में रिकार्ड किया गया, जिसमें "उन्होंने सर्वप्रथम कुमाऊँनी लोक संगीत 'न्यौली' गायी थी"[26] सन् 1989 ई. में उन्होंने अपने करियर की शुरूआत की इनका शुरूआती जीवन काफी संघर्ष पूर्ण रहा इन्होंने 6 साल दिल्ली में नौकरी की।

संस्कृति संरक्षण में लोक गायक पप्पू कार्की जी का योगदान–

पप्पू कार्की ने अपने लोक गीतों से कुमाऊँ ही नहीं बल्कि राज्य व देश में कुमाऊँनी संस्कृति का नाम रोशन किया, उन्होनें अपने लोकगीतों के माध्यम से कुमाऊँ की प्राचीन संगीत परंपरा को वर्तमान के साथ जोड़ा उनके गीतों में संस्कृति की झलक स्पष्ट रूप में देखने को मिलती थी, उनके गीतों में कुमाऊँनी भाषा को अखिल भारतीय स्तर पर एक मुकाम दिलाया तथा लोग उनके पहाड़ी गीतों को सुनकर कुमाऊँ की संस्कृति के प्रति आकर्षित होते थे, उनके गीतों में कुमाऊँनी परिधान, खान–पान नृत्य शैली, लोकपरंपराओं की अभिव्यक्ति होती थी, उन्होंने अपने गीतों के माध्यम से कुमाऊँनी संगीत के साथ ही संस्कृति को आगे बढ़ाने का कार्य किया तथा अपनी संस्कृति से विमुख वर्तमान युवा पीढ़ी को अपनी प्राचीन कुमाऊँ व भारतीय संस्कृति की तरफ खींचा।

नैन नाथ रावल –

इनका जन्म 13 मई 1943 को जनपद अल्मोड़ा के दन्या ग्राम सिरौड़ा में हुआ इनके पिता का नाम श्री टिकनाथ रावल और माता का नाम श्रीमती बिसनी देवी था, इन्होंने लोकगायन के क्षेत्र में कार्य किया अपने संगीत से संस्कृति को बचाने का कार्य किया, बचपन से ही आपको संगीत में रूचि थी "उन्होंने मोहन सिंह रीठागड़ी जी से प्रेरित होकर अपने संगीत की यात्रा को आरम्भ किया"[27] जागेश्वर में रीठागाड़ी ने एक समारोह में इनकों गाने का अवसर दिया यहीं से इन्होंने अपने संगीत के हुनर को जनमानस के आगे रखा इन्होंने लगभग 125 से अधिक गीतों की रिकार्डिग की है, आपने सबसे पहले अपनी रिकार्डिग हिरदा कुमाऊँनी के लिए की, आपकी आरम्भिक शिक्षा दन्या में ही हुई और सातवीं और आठवीं की पढ़ाई दिल्ली से की सन् 1970 ई. में इन्हें बैंक में नौकरी मिल गयी लेकिन नौकरी में इनका मन नहीं लगा, 14 जनवरी 1971 ई. में इण्डो–पाक युद्ध आरम्भ हो गया उसी दिन इन्होंने भी नौकरी से त्याग पत्र दे दिया, उसके बाद संगीत से ही अपनी संस्कृति को आगे बढ़ाने का कार्य किया। और अपना समस्त जीवन संगीत को ही समर्पित कर दिया।

संस्कृति संरक्षण में नैन नाथ रावल जी का योगदान –

नैननाथ रावल जी ने अपनी कला के माध्यम से संस्कृति संरक्षण के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रयास किये और आजीवन अपनी कला के माध्यम से प्रदेश के साथ ही देश में कुमाऊँ क्षेत्र का नाम रौशन किया।

मालूशाही गायक मोहन सिंह रीठागाड़ी –

इनका जन्म सन् 1905 ई. में पिथौरागढ़ में हुआ था, इनके पिता का नाम हिम्मत सिंह बोरा था जिनकी दो शादियाँ थी, "उनके आठ पुत्र और 3 पुत्रियाँ थी"[28] मोहन सिंह जी सबसे छोटे पुत्र थे, मोहन दा का मन बचपन से ही पढ़ाई लिखाई में नहीं लगा, वे विनोदप्रिय थे, उनके लिए काला अक्षर भैंस बराबर रहा, क्योंकि उनका जन्म ही संगीत के लिए हुआ था, मोहन दा के अन्य भाई पढ़ लिख कर प्रतिष्ठित और संपन्न हैं। बचपन से ही मोहन दा के कानों में राजुला–मालूशाही की प्रेम कथा और मोहक संगीत रच–बस गया था, यह संगीत उन्हें देवयोग से प्राप्त हुआ, मोहन दा कहते है कि एक बार गाँव के "एक बारूड़ी डलिया–टोकरी बनाने वाले शिल्पकार से उन्होनें पहली बार राजुला मालूशाही की कथा सुनी थी"[29] वह कुछ समय मेवाड़ के जानकार लोगों से मालूशाही की कथा सीखकर वापस अपने गाँव आया था, "सेराघाट के क्षेत्र में मात्र वह ही शिल्पकार ही एक ऐसे कलाकार थे"[30] जो मालूशाही की कथा को जानते थे, इस बारूड़ी लोकधुन गायक में नई–नई धुन ग्रहण करने की काबिलियत थी, इसलिए वह घूम–घूम कर अपनी धुनों को स्वयं बनाता था, इसी कार्य को बाद में मोहन सिंह ने भी किया, मोहन सिंह ने उस बारूड़ी गायक से मालूशाही को सीखा था कुछ समय मोहन दा उस बारूड़ी गायक के साथ रहे और उनकी कला को आत्मसात कर लिया, मोहन लोक गीतों का धुनी था, "और स्वयं आशुकवि था"[31] मोहन दा ने मेलों में जाकर बैर गायकों के बीच में जाकर बैर गायकी भी सीख ली, अल्मोड़ा के समस्त मेलों में जाकर उन्होंने विभिन्न प्रकार की छपेलियों, झोड़ों तथा चांचरियों का संगीत संचय करना आरम्भ किया, मोहन दा ने अपने "परिवार का भरण पोषण करने के लिए बंजारे का पेशा अपनाया और अल्मोड़ा में घोड़ों पर सामान लादकर गंगोलीहाट, बेरीनाग, लोहाघाट, और पिथौरागढ़ की मंडियों में ले जाकर बेचने लगे"[32] हाथ में सैन्टी, कंधे में एक झोला और उसके झोले में हमेशा हुड्डुका रहता था, जिसे वे समय मिलने पर बजाते थे। जब भी उन्हें समय मिलता वे मालूशाही गाते थे "कभी–कभी बैर गायकों के अखाड़े में जाकर हृदय को टीसने वाली 'न्यौलिया' गाकर स्वयं भी और श्रोताओं को भी भावुक कर देते थे"[33] इस प्रकार बंजारे गायक मोहन दा पर्वतीय अंचलों के मेलों और उत्सवों को आर्कषण बन गये, उनको सुनने के लिए दूर–दूर से श्रोता आते थे, लगभग 40 वर्ष की आयु में "उन्हें अल्मोड़ा के रिठागाड़ में नौगाँव के बिष्ट कुल में मोहन दा की बहन का ससुराल था"[34] उनके जीजाजी जो स्वतंत्रता सेनानी थे उन्होंने उन्हें विशेष प्यार और प्रोत्साहन दिया, उन्होंने मोहन सिंह की कला का प्रदर्शनी को आयोजित करवाते थे और उन्हें प्रोत्साहित करते रहते थे ।

दिल्ली में स्थिल 'पर्वतीय कला केन्द्र' ने भी मोहन सिंह को यथेष्ट आदर और सम्मान देकर विदा किया, 28 जनवरी 1984 ई. को लगभभग 79 वर्ष की आयु में इनका स्वर्गवास हो गया। इनकी इस गायन परंपरा को आगे बढ़ाने का कार्य इनके पुत्र चंदन और गिरीश के गायन में देखने को मिलती है।

संस्कृति संरक्षण में मालूशाही मोहन सिंह रीठागाढ़ी जी का योगदान

मोहन सिंह जी ने कुमाऊँनी लोकगाथा मालूशाही गायन को आसमान की ऊंचाइयाँ दी उन्होंने इस गायन शैली को राज्य के साथ ही अखिल भारतीय स्तर पर उभारने का कार्य किया, वे ना केवल मालूशाही गायन तक ही सीमित रहीं रहे अपितु उन्होंने जिस भी गाथा गायक में जो भी विशेषताऐं देखी उनको अपने में आत्मसात कर लिया, और उसे अपने गायन में जोड़ दिया, विभिन्न जागर, गीतों, छोलियों तथा हुड़कियॉ बौलों से धुनें बटोरकर अपने गायन में निखार लाये और गायन की एक नवीन शैली को जन्म दिया, इस प्रकार उनका मालूशाही गायन 'मिश्रित ठुमरी' का स्वाद देता है जिसमें रूप रस और भावों का मोहक समन्वय निहित रहता है। इसी विशिष्ट शैली के आधार पर उन्होंने संस्कृति संरक्षण के क्षेत्र में अपने गीतों के माध्यम से संस्कृति को जोड़ने और उसे सहेजने का कार्य भी किया, इन्होंने शास्त्रीय संगीत के विभिन्न घरानों के संगीत से अच्छी लगने वाली धुनों को लेकर उनको मिश्रित कर दिया और एक ठेठ कुमाऊँनी शास्त्रीय संगीत को मालूशाही संगीत से जोड़ दिया, जब तक मालूशाही की गाथा गाई और सुनी जायेगी और जब शोधकर्ता उस पर कार्य करते रहेंगे तक तक मालूशाही गायन के एक मिश्रित घराने के रूप में याद किया जाएगा और कुमाऊँ में मालूशाही गायन के माध्यम से कुमाऊँनी संस्कृति को आगे बढ़ाने में उनके योगदान को हमेशा याद किया जाएगा।

लोक गायक गोपीदास –

इनका जन्म सन् 1902 ई. में एक शिल्पकार टेलर मास्टर के घर में हुआ था, इनके पिता अपनी पुश्तैनी गाथा गायन का कार्य करते थे, 'बौल गायन और 'जागरी गाथा' के कार्य में ये योग सिद्धहस्त थे। इनके दादा जी बौल गाते थे और इनके पिताजी दुतारि बजाकर उनक बोलों को दोहराते थे, गोपीदास जी इन्हें बचपन से ही देखते सुनते आ रहे थे, इस दास परिवार को बड़े राजघरानों में विशेष उत्सवों में गाने के लिए आंमत्रित किया जाता था, गोपीदास को गाथा गायन पुश्तैनी विरासत के रूप में प्राप्त हुई थी, इनके पिता और दादाजी कला प्रेमी भी थे, जहाँ से जो कुछ मिल जाता उसे वे लोग लेकर अपने गायन में पिरो देते थे। इसी प्रकार उन्होंने अपने गाथा गायन के भण्डार को विस्तृत कर लिया था, एक बार बिष्ट ठाकुर चौखुटिया–गेवाड़ से आये, वह मालूशाही राजा के बैराठ प्रदेश से थे, अपने राजा की वंशावली एवं समस्त गाथा उन्हें पूरी याद थी, गायन में भी वे पारंगत थे, सकार गाँव में इस ठाकुर गायक को पूर्ण सम्मान एवं

श्रद्धा मिली, उनके बारे में यह भी कहा जाता है कि केवल मालूशाही गाने के लिए ही उन्हें डोली में बैठाकर सम्मान के साथ सकार गाँव लाया गया था। जहाँ वे लगभग 6 माह रहे और आसपास के इलाके को राजुला मालूशाही के गीतों से सराबोर करते रहे, गोपी के दादा और पिता अनन्य भाव से उस अतिथि गायक की सेवा करने लगे और उसकी कला के प्रति पूरी तरह समर्पित हो गये, उस अतिथि गायक के आने का पूरा लाभ हुआ बालक गोपी को जिसकी रग–रग में केवल आठ वर्ष की उम्र में ही राजुला मालूशाही की बैराठी कथा समा गयी। इसीलिए बाद में गोपीदास मालूशाही गायन में बैराठी शैली के अधिकारपूर्ण गायक के रूप में प्रतिष्ठित हो गये, अतिथि गायक के चले जाने के बाद उनकी गायी हुई गाथा का अभ्यास दास परिवार में चलने लगा, दादा गाते, पिता दोहराते और बालक गोपी सुनता और याद करता रहा, "इस प्रकार पंद्रह वर्ष की अवस्था में गोपी को सम्पूर्ण गाथा तथा बैराठी गायकी का यथेष्ट ज्ञान हो गया"[35] गोपी की ख्याति बढ़ने लगी, दादा दिवंगत हो चुके थे, पिता अपने किशोर पुत्र को हमेशा बढ़ावा देते रहे, वह गोपी से बार–बार मालूशाही सुनते और कभी–कभी उसकी गायकी में सुधार और जोड़–तोड़ करते रहते, इस प्रकार से गोपी ने गायन जारी रखा और उसमें पारंगत होने लगा "अपने प्रतिभावान बेटे को गाथा गायन और सिलाई के पुश्तैनी कार्य का छोड़कर कलाकार पिता ने भी संसार से विदा ली, धीरे–धीरे किशोर अवस्था में यौवन का उन्माद भरने लगा, किशोर गोपालराम, युवक गोपीराम मालूशाही वाला' बन गया, वह सभी जगह प्रशंसा और ख्याति पाने लगा, 20 साल का यहा युवा कलाकार संपूर्ण बारामंडल परगना में प्रमुख मालूशाही विशेषज्ञ के रूप में अपनी पहचान बना चुका था। विशेष ग्राम उत्सवों, शादी विवाह समारोहों के मौकों पर रात्रिकालीन मनोरंजन के लिए गोपीराम को बुलाया जाने लगा, रात भर श्रोत्रा गोपीराम को सुनते ओर मंत्र मुग्ध हो जाते, इस तरह विशेषकर ग्रामीणों के बीच गोपी काफी चर्चित हो गया, गाँव की विशिष्ट वर्ग की बालिकाऐं गोपीदास के आकर्षण में आने लगी धीरे धीरे उच्च वर्ग की बालिकाऐं गोपीदास से मिलने हेतु बैरागी होने लगी उच्च वर्ग में इस कारण असंतोष व्याप्त होने लगा और वे लोग गोपी दास के जान के दुश्मन बन गये, इससे व्यथित होकर गोपी दास गाँव छोड़कर चले गये। टूटा हुआ गोपीराम अपने हुड़के के साथ कौसानी की ओर चले गये, ओसभरी संध्या और ज्यूनाली रातों में हुडुका फिर घुमकने लगा, आसपास के ग्रामों के आँगन में राजूला मालूशाही की प्रेम कथा गूंजने लगी और असंख्य श्रोताओं को मंत्र मुग्ध करने लगी और गोपाल राम टेलर राजूला मालूशाही की गाथा का प्रख्यात गायक गोपीदास बन गया। क्योंकि कौसानी गाँव के आसपास के सभी ग्रामीण उसे गोपीदास के नाम से पुकारने लगे उसका यही गायक नाम अधिक प्रसिद्ध हो गया।

संस्कृति संरक्षण में गोपीदास जी का योगदान –

गोपीदास ने कुमाऊँ की कंदराओं से राज्य के साथ ही अखिल भारतीय स्तर पर संस्कृति संरक्षण के लिए उल्लेखनीय कार्य किये, उन्होंने कुमाऊँनी मौखिक गाथाओं में राजुला मालूशाही को उत्कृष्ट रूप से कुमाऊँनी जनमानस के आगे प्रस्तुत किया जिससे यहाँ के लोग कुमाऊँ की समृद्ध गायन परंपरा की ओर आकृष्ट हुए कुमाऊँ की प्राचीन गायन परंपरा को बचाने और संस्कृति संरक्षण के क्षेत्र में उनके द्वारा किये गये कार्यों से वे हमेशा के लिए कुमाऊँ वासियों के हृदय में अपनी छाप छोड़ गये हैं, जिससे कुमाऊँनी गायकी के क्षेत्र में कार्य कर रहे कलाकारों को नयी दिशा मिल रही है।

हीरा सिंह राणा 'हिरदा' कुमाऊँनी

इनका जन्म 16 सितंबर 1942 ई. को हुआ इनका पैतृक गाँव जनपद अल्मोड़ा के मानिला तहसील के अन्तर्गत डंढोली में हुआ था, इनके पिता का नाम स्व मोहन सिंह और माता का नाम स्व नारंगी देवी था, ये कुल पाँच भाई थे और अपने भाईयों में सबसे बड़े थे। सन् 1959 ई. में वे नौकरी करने के लिए दिल्ली चले गये उन्होंने संगीत के क्षेत्र में 'हिरदा कुमाऊँनी के नाम से प्रसिद्ध हुए, 15 साल के उम्र से ही उन्होंने गाने की शुरूआत की, एक बार गोविन्द बल्लभ पंत की पुण्यतिथि पर उन्हें कार्यक्रम में गाने के लिए दिल्ली आमंत्रित किया गया, जहाँ उन्होंने 'आ लिली बाकरी' गीत को गाकर, लोगों के दिलों में जगह बना ली। पंत जी की पत्नी उनसे काफी प्रभावित हो गयी और उन्होंने हिरदा को चाय पर आमंत्रित कर दिया और उन्हें प्रोत्साहन भी दिया, सन् 2019 में दिल्ली सरकार द्वारा कुमाऊँनी, गढ़वाली, जौनसारी भाषा अकादमी का पहला उपाध्यक्ष बनाया गया। 13 जून 2020 को 78 वर्ष की आयु में दिल का दौरा पढ़ने से उनकी मृत्यु हो गयी। आ लिली बाकरी लीली, रंगीली बिंदी घाघरी काई के भलो मान्यो छ हो, आजकल है रे जवाना। आदि इनके प्रसिद्ध गीत हैं। इनकी पत्नी का नाम बिमला राणा और था इनका परिवार संपन्न परिवार था

संस्कृति संरक्षण में हीरा सिंह राणा जी 'हिरदा कुमाऊँनी' का योगदान –

हिरदा ने ग्रामीण परिवेश से निकल कर राज्य व राष्ट्रीय स्तर पर कुमाऊँनी संस्कृति को अपनी संगीत के माध्ययम से आगे बढ़ाने का कार्य किया, और आधुनिकता की दौड़ में जा रहे कुमाऊँ सहित राज्य और देश के जनमानस का ध्यान अपनी गौरवमयी संस्कृति की ओर खींचा।

झूसिया दमाई –

इनका जन्म 1910 ई. में धारचूला, पिथौरागढ़ में हुआ था इनके पिता का नाम श्री रानुवा दमी और माता का नाम रनुली देवी था, इन्होंने दो शादियॉ की थी। इनका मूल निवास स्थान नेपाल में स्थित बैतड़ी जनपद के अन्तर्गत बसकोट

ग्राम था, वे 'भड़ौ गायन' के विशेषज्ञ थे, कुमाऊँ और नेपाल के पुराने 'पैकों वीरगाथाओं' को 'भड़ों कहा जाता है। झूसिया दमाई का परिवार पिछले 35 वर्षों से दूंगातोली गाँव में रह रहा है, 'भड़ौ गायन' इनका पुश्तैनी कार्य है। इन्होंने अपने पिता से लोक गायन की कला सीखी, इस परिवार को नेपाल व धारचूला क्षेत्र में इष्टकुलार्थ वर्षों से एक ऐसा कर निधार्रित किया गया है कि चैत्र अश्विन और कार्तिक में देवताओं का स्तुतिगान करें, और नेपाल के त्रिपुर सुन्दरी, जगन्नाथ और भगवती के मंदिरों में यह परिवार पीढ़ियों से गाथाएँ गाने का कार्य करते हुए आ रहा है, वे कहते हैं कि इष्टकुल का ऋण को चुकाने के लिए वीर गाथा गााायन हमारा जरूरी काम था। वे बताते है कि इस अंचल में '22 भड़ौं वीर' खासतौर पर प्रसिद्ध हैं, छुराखाती, भी कठायत, संग्राम कार्की, सौन, रौत, रन रौत, लालसौन, सौर माहरा, कालू भण्डारी, उदाई छपलिया, नरसिंह धौनी आदि शामिल है,

संस्कृति संरक्षण में झूसिया दमाई जी का योगदान –

झुसिया दमाई ने अपने भडौ गायन से राज्य ही नहीं अपितु अर्न्तराष्ट्रीय रूप में दो देशों की संस्कृतियों को एक मंच प्रदान किया नेपाली और कुमाऊँनी संस्कृति में उन्होंने भड़ौ गायकी के द्वारा एकसूत्र में पिरोने का कार्य किया है, तथा कुमाऊँनी संस्कृति को एक अर्न्तराष्ट्रीय मंच प्रदान किया है, उनकी भडौ गायकी भले ही आज विलुप्ति के कगार पर है लेकिन इस गायन से उन्होंने कुमाऊँ सहित नेपाल की पूर्व गौरवमयी संस्कृति को जनमानस के समक्ष रखने का प्रयास किया, इसी प्रयास को आगे बढ़ाने के लिए सरकारी प्रयास भी जरूरी है।

सन्दर्भ–

1. पृष्ठ देवीपुराण महाभागवत शक्तिपीठ, कल्याण 2005, पृष्ठ 47
2. कठौच, डा0 यशवंत सिंह, उत्तराखण्ड संस्कृति, मौलाराम विशेषांक, उत्तराखण्ड शोध संस्थान, प्रकाशन, पौड़ी पृष्ठ 123–128
3. सिंह, डा0 राम काली कुमाऊँ 2002, पृष्ठ 319–20 मूलपाठ
4. उप्रेती कुलदीप, लोहाधाट तब और अब, संस्कृति सुमन स्मारिका 2009, पृष्ठ 207,
5. चौहान भट्ट, मल्ल और मध्यकालीन उत्तराखण्ड 2010 पृष्ठ 16
6. वर्मा चिरंजी लाल, संस्कृति सुमन स्मारिका 2009, सूर्य मंदिर खेतीखान आलेख चम्पावत, पृष्ठ 96
7. पंडित तारादत्त अपने मुलुक का भूगोल, पहाड़ – 1997, पृष्ठ–9
8. धौनी जोगा सिंह, गुमदेश के प्रसिद्ध चैतोल मेले के इतिहास की एक झलक, 2007 चंपावत उत्तराखण्ड
9. राय प्रकाश चन्द्र संस्कृति सुमन स्मारिका लोहाघाट, 2009, पृष्ठ 50
10. जोशी, ज्वाला दत्त, लधौनधुरा शिव मंदिर आलेख पृष्ठ 52–53
11. तिवारी, डा. मोहन चन्द्र दि डिवाइन हिमालयन योगी, पृष्ठ 108–109
12. रूद्रेश्वर महादेव मंदिर जीर्णोद्धार समिति' रिपोर्ट ग्राम सनणा, जनपद अल्मोड़ा
13. भास्कर बुधानी उम्र 40 वर्ष साक्षात्कार ग्राम चौड़िया भीमताल दिनांक 16/05/2020 समय 8 पी.एम
14. निवेदिता मध्य हिमालय का लोक धर्म अंकित प्रकाशन, हल्द्वानी 2004
15. पूर्वोक्त कठौच यशवंत सिंह पृष्ठ 30
16. इन्द्रा देवी 75ः वर्ष साक्षात्कार ग्राम गोगिना बागेश्वर, 04/05/2019 समय 7 पीएम
17. रूद्रेश्वर महादेव मंदिर जीर्णोद्धार समिति' रिपोर्ट ग्राम सनणा, जनपद अल्मोड़ा
18. नवीन चन्द्र उम्र 55 वर्ष साक्षात्कार ग्राम दिनांक 11/06/2020 समय 8 पी.एम.
19. भगवंत लाल उम्र 39 वर्ष साक्षात्कार ग्राम हवालबाग अल्मोड़ा दिनांक 23/06/2020 समय 7 पी.एम.
20. महंत देवानंद दासः 70ः वर्ष साक्षात्कारः तप्त कुण्ड बागेश्वर, 07/07/2019 समय 2 पी.एम.
21. कमल कोरंगा उम्र 35 वर्ष साक्षात्कार बागेश्वर दिनांक 12/03/2020 समय 7 पी.एम.
22. हरीशलाल उम्र 75 वर्ष साक्षात्कार ग्राम व पोस्ट मेहरागाँव दिनांक 05/08/2019 समय 8 पीएम.
23. पूर्वोक्त साक्षात्कार इन्द्रा देवी
24. देवी लाल 79 वर्ष साक्षात्कार ग्राम व पोस्ट मेहरागाँव दिनांक 27/05/2019 समय 6 पीएम.

25. टीकम सिंह उम्र 67 वर्ष साक्षात्कार ग्राम मेहरागाँव दिनांक 14/04/2021 समय 6 पी.एम.
26. मोहन सिंह गढ़िया 71 वर्ष साक्षात्कार पूर्व प्रधानाचार्य शाम ग्राम पोथिंग बागेश्वर, 06/07/2019 समय 6 पी.एम.
27. मोहन चन्द्र जोशी 67 वर्ष साक्षात्कार ग्राम कलांग बागेश्वर, 05/07/2021 समय 5 पी.एम.
28. जोशी, ज्वाला दत्त, लधौनधुरा शिव मंदिर आलेख पृष्ठ 52–53
29. शेर सिंह धपोला, 92 वर्ष साक्षात्कार बागेश्वर, 04/07/2019 समय 5 पी.एम
30. पूर्वोक्त साक्षात्कार मोहन सिंह गढ़िया
31. कुमार राजेश उत्तराखण्ड हिमालय में सतत् आर्थिक विकास एव नियोजन रिसर्च इंडिया प्रेस, नई
32. पूर्वोक्त साक्षात्कार टीकम सिंह
33. पद्म सिंह कोरंगा, 66 वर्ष साक्षात्कार ग्राम नौकोड़ी, बागेश्वर, 05/04/2018 समय 2 पी.एम.
34. पूर्वोक्त,तिवारी, डा. मोहन चन्द्र पृष्ठ 108
35. बसंत बल्लभ पाठक 87वर्ष साक्षात्कार ग्राम दशौली पांखू पिथौरागढ़ 04/05/2020 समय 4 पी. एम.